13/5

ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते।।३।।

ज्ञेयः=जानना चाहिए; **सः**=उसे; **नित्य**=सदा; **संन्यासी**=संन्यासी; **यः**=जो; **न**=नहीं; **द्वेष्टि**=द्वेष करता; **न**=नहीं; **कांक्षति**=इच्छा करता; **निर्द्वन्द्वः**=द्वन्द्वों से मुक्त; **हि**=निस्सन्देह; **महाबाहो**=हे महाबाहु; **सुखम्**=सुखपूर्वक; **बन्धात्**=बन्धन से; **प्रमुच्यते**=मुक्त हो जाता है।

अनुवाद

जो पुरुष न तो कर्मफल से द्वेष करता और न कर्मफल की इच्छा करता, उसे नित्य संन्यासी ही जानना चाहिए, क्योंकि हे महाबाहु! ऐसा निर्द्वन्द्व मनुष्य सुखपूर्वक **भवबन्धन से मुक्त** हो जाता है।।३।।

तात्पर्य

पूर्णतया कृष्णभावनाभावित पुरुष नित्य संन्यासी है, क्योंकि उसमें अपने कर्मफल के प्रति द्वेष अथवा कामना का अत्यन्त अभाव हो जाता है। अलौकिक भक्तियोग के परायण ऐसे संन्यासी को पूर्ण ज्ञानी जानना चाहिए क्योंकि वह भगवान् श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में अपने स्वरूप को जानता है। वह भलीभाँति जानता है कि श्रीकृष्ण अंशी हैं और वह उनका भिन्न-अंश है। यह ज्ञान पूर्ण है, क्योंकि इसमें यह सत्य स्पष्ट झलकता है कि चिद्गुणों में श्रीकृष्ण और जीवों में अभेद है और विस्तार में भेद है। श्रीकृष्ण से जीव के एक होने की धारणा भ्रान्तिमूलक है; वह अंशी के बराबर कभी नहीं हो सकता। जीव चिद्गुणों में श्रीभगवान् से अभिन्न है, किन्तु विस्तार में भिन्न है—इस यथार्थ ज्ञान के द्वारा आकांक्षा और शोक से मुक्त आत्मतुष्टि की प्राप्ति होती है। ऐसे ज्ञानी के चित्त में द्वन्द्वों का अत्यन्त अभाव हो जाता है, क्योंकि वह जो कुछ भी करता है, श्रीकृष्ण की प्रसन्नता के लिए ही करता है। द्वन्द्वातीत हो जाने से इस प्राकृत-जगत् में रहते हुए भी वह जीवन्मुक्त है।

13/5

सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विन्दते फलम्।।४।।

सांख्य=प्राकृत-जगत् के तत्त्वज्ञान (और); **योगौ**=भक्तिभावित कर्म को; **पृथक्**=भिन्न; **बालाः**=अल्पज्ञ; **प्रवदन्ति**=कहते हैं; **न**=नहीं; **पण्डिताः**=विद्वान्; **एकम्**=एक में; **अपि**=भी; **आस्थितः**=स्थित हुआ; **सम्यक्**=भलीभाँति; **उभयोः**=दोनों का; **विन्दते**=प्राप्त होता है; **फलम्**=फल।

अनुवाद

अज्ञानी ही भक्ति और भक्तिभावित कर्मयोग को सांख्ययोग से भिन्न कहते हैं। यथार्थ विद्वानों का तो कहना है कि इनमें से एक मार्ग का भी भलीभाँति अनुसरण करने वाला दोनों के फल को प्राप्त कर लेता है।।४।।